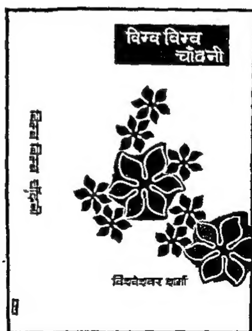
शिक्षक - दिवस

1969



बिम्व बिम्ब चाँदनी

[गीत संग्रह]

विश्वेश्वर शर्मा



शिक्षा विभाग राजस्थान के लिए

राजस्थान प्रकाशन
जयपुर

मूल्य :
चार रुपया मात्र

शिक्षा विभाग राजस्थान के लिए
जे० एल० जसोरिया
राजस्थान प्रकाशन
जयपुर
द्वारा प्रकाशित

संस्करण :
प्रथम, सितम्बर १९६९

मुद्रक :
राजकमल प्रिन्टर्स
जयपुर

BIMBA BIMBA CHANDNI By Vishweshwar Sharma
Poetry, Rs. 4/–

आमुख

राजस्थान के सृजनशील शिक्षकों की रचनाओं के शिक्षा विभाग, राजस्थान द्वारा प्रकाशन की योजना के अन्तर्गत अब तक विगत वर्षों में हिन्दी तथा उर्दू की कुल आठ पुस्तकें प्रकाशित की जा चुकी हैं। इस वर्ष पांच संग्रह प्रकाशित किये जा रहे हैं जिनमें एक संग्रह राजस्थानी भाषा की कहानियों का भी है।

यह बड़े संतोष तथा प्रसन्नता की बात है कि विभाग की इस योजना का स्वागत सभी क्षेत्रों में हुआ है। सृजनशील शिक्षकों में एक नई उत्साह की लहर उठी है और अब प्रतिवर्ष अधिक से अधिक शिक्षक लेखकों की रचनाएँ प्रकाशनार्थ प्राप्त होने लगी हैं।

आशा है शिक्षक दिवस, 1969 के अवसर पर प्रकाशित किये जा रहे इन ग्रंथों में पाठकों को नई-नई, विविध, रोचक तथा प्रेरणाप्रद सामग्री पढ़ने के लिए प्राप्त होगी और वे उसका पूरा आनन्द उठायेंगे।

राजस्थान के प्रकाशकों ने विभाग की इस प्रकाशन योजना में भरपूर योगदान दिया है। इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं। इसी प्रकार जिन शिक्षकों ने इन संग्रहों के लिए अपनी रचनाएँ भेजी हैं, वे भी धन्यवाद के अधिकारी है।

हरिमोहन माथुर
निदेशक
प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा
राजस्थान, बीकानेर

प्रतिविम्ब

एक ओर बिखरा हुआ जीवन का व्यामोह। एक विन्दु पर अचल प्रतिष्ठित आस्था। सन्निकट घूमती सुधियां, अनेक स्मृतियां और सामने दीखती उज्ज्वल अपेक्षामयी भवितव्यता। अन्तर-बाह्य के स्पष्ट ही दो भिन्न मार्ग। स्वप्न-सुषुप्ति तथा जागृति के तीनों संसार। एक विचित्र घेराव के मध्य किसी खुले रंगमंच पर अपनी विभिन्न भूमिकाओं के अभिनय मे व्यक्तित्व संरक्षण, अस्तित्व संवर्धन। अपने अन्त:कोप को खुले हाथों लुटा देने की अदम्य एषणा। प्रकृति के एक-एक इंगित को, सूक्ष्म से सूक्ष्मतर संकेत को प्रति-बिम्बित कर देने की दृढ़ निष्ठा। उन्मेष, अनुभूति, भावना और विचारों के प्रति अपने तटस्थ उत्तरदायित्व का साहसपूर्ण संकल्प।

देखता हूँ कई वाद प्रतिवाद और विवादों से मेरी अग्नि ने कितना ऊपर उठा रखा है मुझे। अवसर ही नही मिलता किसी वितृष्णा, व्यवहारिकता, व्यभिचारिकता में घुल-मिल जाने का मेरे अपने स्वधर्म का जाने कैसी विराटता से सानिध्य है ?

प्रत्यग्र प्रतीयमान के प्रति सर्वथा समर्पित अन्तर्दृष्टि स्थितियों तथा समस्याओं के सर्वेक्षण-विश्लेषण तक कभी सीमित नही रही। उसने कुंठा, त्रास, उत्पीड़न तथा नैराश्य के घटा-टोप से बाहर आ-आ

कर एक नव संसार की परिकल्पना को साकार करने की अनवरत चेष्टा की है। प्रकाश की प्रतिपल उपस्थिति पर संदेह दृष्टि कभी नहीं गिरी। अन्धकार को एक अवश्यंभावी परिणति के रूप में स्वीकारना मेरे अन्तरंग काव्यकार को स्वीकार नहीं है। विस्थापितता में एक विशिष्ट स्थायित्व का बोध अक्षुण्ण है।

सृष्टि की अनिवार्यता के रूप में, सृजन के साधन रूप में संस्कृति की गतिमयता के रूप में युग नाटक के प्रत्येक दृश्य को निर्विशंक दृष्टि से देख रहा हूँ। उद्वेग, आक्रोश, उन्माद, उत्साह तथा उल्लास सभी का आनन्द उन्मेष के माध्यम से ग्रहण किया है। प्रत्येक भाव-स्वभाव को प्रेम में परिणत होना पड़ता है। यह प्रेम में परिणति ही काव्य का उद्गम है। इसी स्थल पर सन्तोष की सांस आती है। झिलमिलाता-सा एक सुखद दृश्य दीखता है। चीखती-चिल्लाती भीड़ योग्य चिकित्सक के हाथों पड़े रोगी से अधिक कुछ नहीं प्रतिभासित होती।

चांदनी, जो बिम्ब-बिम्ब में बिखरी है अनेक रूप-उपरूप विद्रूप और विशिष्ट रूपों को प्रकाशित करती हुई भी स्वयं में कितनी विशुद्ध, निर्विकार, उज्ज्वल तथा प्रसन्नमना है। चांदनी, जो मात्र वस्तुस्थितियों को प्रकाशित ही नहीं कर रही, वरन् स्वयं अपने अनुरूप एक मोहक सृष्टि का सर्जन भी कर रही है। जिसे समस्त संक्रमण के बावजूद अपनी उज्ज्वलता पर शाश्वत विश्वास है। अन्धकार के एक-एक रेशे को काटती हुई, अपने अमृत-तत्व से निरंतर समष्टीगत हलाहल को निष्प्राण करती एक नूतन सृष्टि-सर्जन में निरत इन मयूखों को देख-देख कर मैं आनन्द विभोर हो उठता हूँ। मेरी समस्त थकान तिरोहित हो जाती है। सदा सर्वदा एक नये साहस का संचरण मेरी शिराओं में व्याप्त रहता है।

इस साहस के सम्मुख बौद्धिक परिणाह एक ऐन्द्रजालिक प्रवंचना से अधिक कुछ नहीं लगता। सृष्टि की अवश्यंभावी प्रक्रियाओं

में अपने अहम् की दौड़ नितान्त निरीह जान पड़ती है। जो कुछ प्रतिफलित हो रहा है उसे परिलक्षित परिप्रेक्ष्य में इन समस्त असामञ्जस्यताओं का उद्धार देख कर मेरी दृष्टि-विशेष कोटि-कोटि कलुषताओं के उपरान्त एक सात्विक सुगन्धि से मदान्ध हो उठती है और लगता है इस विशृंखलन के उद्देश्य रूप ही में निरंतर नये संसार की, एक शान्त समाज की, एक संस्कृत व्यक्ति व्यवस्था की पल-पल रचना हो रही है। और कविता का यह उत्तरदायित्व है कि इस अन्तराल के साक्ष्य को सहेजे हुए उस दिव्यता के प्रति अपनी सामर्थ्य को, शक्तिमता को सम्पूर्णतः प्रति निवेदित करती रहे। भूत और वर्तमान से अधिक भविष्यत् के प्रति कविता की स्वाभाविक अभि-रुचि का मार्ग है। वह इस क्षण की समस्त पारिभाषिकताओं के प्रति अपनी संवेदना का मुक्त साहचर्य रखती हुई भी अपने गंतव्य के प्रति इतनी सचेष्ट है कि कोई भी उद्वेलन उसकी अविकलता में गत्यावरोध लाने जैसी स्वस्थता में दिखाई नहीं देता।

उपलब्धि की दुरूहता के कारण पारिवेशिक प्रतिबद्धता में कविता निरूपित की जाती रही है। फिर परिवेश और प्रतिबद्धता में सहजता तथा सरलता की समन्विति न पाकर केवल मुक्त शब्दों में कविता के यथार्थ स्वरूप को खोजा गया है। लेकिन कविता का स्वरूप केवल शब्दों तक ही परिसीमित न होकर इससे भी आगे संकेतों-ध्वनियों और स्वरों में परिवेष्टित मुझे प्रतीत हुआ है। अन्तःकरण से स्वतः सीधा ओठ पर आजाने वाला गीति स्वरूप कविता की उस सार्वभौमिक सत्ता को सम्पूर्णतः प्रकाशित करता सा मुझे दीख पड़ा है।

कविता मेरे लिए इष्ट साधना रही है। इसकी सहज सम्प्रेष-णीयता के प्रति सदा अग्रशील रहकर इसके विशुद्ध प्राकट्य हेतु मैंने अपने मनोजगत को प्रायः भारशून्य स्थिति में अनुभव किया है। अपने 'स्व' की विस्मृति से मैंने कविता के सर्वाङ्गपूर्ण व्यक्तित्व की

उत्पत्ति का चमत्कार देखा है और देखी है इसकी विश्वस्त सृष्टि-मयता, निश्चित प्रभावोत्पादकता, स्थायी सत्याग्रहता । ज्यों ज्यों मैं इसके सन्निकट हुआ हूँ, त्यों-त्यों इसके शुभाशुभों से आहत हुआ हूँ इसकी शक्ति-सम्पन्नता से प्रभावित हुआ हूँ और यह निश्चय प्रखरतर हो उठा है कि काव्य साधना की विशुद्धता बनाये रखने हेतु अपनी प्रगल्भता से अधिक प्रगुणता का प्रणिधान अधिक प्रतिग्रहणीय है ।

काव्य कर्म में किसी दैविक शक्तिमता की उपस्थिति से मैंने अपने मनोदेश को सदा अभिमन्त्रित अनुभव किया है और इस प्रतीति से यह विश्वास अत्यधिक प्रवल होता रहता है कि यह प्रकृत-प्रक्रिया माध्यम रूप से किसी मानवीय संयंत्र में प्रस्फुटित होती है ।

बिम्ब-बिम्ब चांदनी में मेरे अनेक गीतों में से कुछ ही संग्रहीत हैं । सृजन की विभिन्नताओं का समावेश इस संग्रह में धारावरोध की दृष्टि ही से नही किया गया है । भावविशेष के अनेक स्वरूपों में से कुछ स्वरूप प्रतिनिधित्व की दृष्टि से ही इसमे लिए गये हैं । मैं समझता हूँ, मेरी अब तक की गीति साधना का एक इतिवृत्त इस संग्रह में आ गया है ।

ध्यान और आराधना के गूढ़तम आयामों को खोलने की प्रक्रिया में आज भी अन्तर्जगत व्यस्त है । इस व्यस्तता ने मेरे व्यवहारिक जगत को अत्यधिक व्यथित किया है : लेकिन अब तक की अपनी उपलब्धियों से आशान्वित हूँ-आनन्दित हूँ, विश्वस्त हूँ । गुरुवर पं० अक्षयकीर्तिजी व्यास की कृपा से खुले अन्तःकोष का मेरा यह प्रथम संग्रह उन्ही व्रजेश्वर को सादर समर्पित है जिन्होंने पाषाण पर पारिजात खिलाये ।

माघ शुक्ला प्रतिपदा
दिनांक १९ जनवरी १९६९

विश्वेश्वर शर्मा
श्री कृष्ण निकुंज
भटियानी चौहट्टा

बिम्ब संकेत

विचार शुद्ध दे विभामयी

प्रबुद्ध बुद्धि दे प्रभामयी।
विचार शुद्ध दे विभामयी ।।

अनन्त ज्ञान रश्मियां, अखंड सर्जना।
असंख्य भाव धारणा, निरन्त अर्चना ।।
अथक प्रवाह प्रेम के प्रशांत नीर का।
अदम्य भक्ति-भावना, विषय विसर्जना ।।

कृपा-कटाक्ष दे कृपामयी।
दयार्द्र दृष्टि दे दयामयी ।।

स्वभाव सात्विकी, लगाव इष्ट साधना।
चरण-सरोज-सेवना पुनीत कामना ।।
प्रसाद-लोभ, प्रार्थना प्रधान कर्म-सी।
सतत् सुदीर्घ साधना फले महामना ।।

अभय-अकूट-दान निर्भयी।
समस्त शक्ति दे अहिप जयी ।।

विचार विश्ववंद्य तो अनिंद्य कल्पना।
प्रकार रंग-राग की सटीक अल्पना ।।
समर्थ विश्व-बंधुता, विशेष-दक्षता।
विशाल सृष्टि-सत्य की सुचारु शिल्पना ।।

विराट व्यंजना नयी-नयी।
समृद्ध सिद्धि दे सदाजयी ।।



झूमती तलैया

दैया रे।
झूमती तलैया ।।
बौराये आम्र-कुंज
फूले महुए-पलाश ।
तैरती हवाओं में
अनबूझी एक प्यास ।।

भैया रे।
बोलती चिरैया ।।
गंध-गंध-गंध
बस सुगन्धी ही।
अब फिर बहारें
पगलाई-सी अन्धी ही ।।

हैया रे।
सांझ की वलैया ।।
शीत से सजाया तन
पीकर बरसात ।
क्वांर-सी कुंवारी
घर आया मधुमास ।।

सैंया रे।
थाम ले कलैया ।।



रहना री मीन ! जरा गहरे

घाट-घाट घूमते मछेरे ।
रहना री मीन ! जरा गहरे ।।

फैली है डोर गुंथी,
अंधियारे साये है ।
कचन-सी काया पर,
कांटे मँडराये है ।।

बजरे मझधारा में ठहरे ।
रहना री मीन ! जरा गहरे ।।

देख हवा पैनी-सी ।
मुधराई छैनी-सी ।।
आती तट पर हिलोर-
मुंह बाये फैनी-सी ।।

पलटे है मौसम ने पहरे ।
रहना री मीन ! जरा गहरे ।।

धरती प्रसयाई है ।
अम्बर की आंख बन्द ।।
बावरा अहेरी यह,
समय-हँसे मन्द-मन्द ।।

प्रीतम के कान हुए बहरे ।
रहना री मीन ! जरा गहरे ।।



हिरनिया प्यासी-प्यासी फिरे

हिरनिया प्यासी–प्यासी फिरे।
चौंक–चौक कर भरे चौकड़ी
छाया देख डरे॥

कुन्दन वर्ण, कुंआरी काया।
यौवन भार, नशा चढ़ आया॥
उठती आस, उमंगों के दिन,
कैसी आग जरे?

उलझी राह कौन सुलझाये?
अन्तर्दाह कहां बुझ पाये?
बड़ी–बड़ी चंचल अंखियों से–
मन की पीर झरे।

जाने कौन? कहां से टेरे?
चारों ओर व्याध के घेरे॥
हाय! अबोली भोली-तृष्णा,
पल–पल जिये–मरे॥



हिरना कस्तूरी के

मरुथल में दौड़ें रे।
हिरना कस्तूरी के ॥

घेरली अहेरी ने
फिर हरी तराई को।
पहरों में बघवादी
पास की तलाई को ॥

नयनों को छोड़ें रे।
अंसुवा मजबूरी के ॥

हारे पग, प्यासे दृग
यह लम्बा-चौड़ा जग।
दूर-दूर तृष्णा के ताल
औ अजाने मग ॥

उड़ते-से होड़ें रे।
पैमाने दूरी के ॥

जाने किस उपवन में
जीवन मिल पाएगा।
कौन-कहां छूटेगा ?
कौन साथ आएगा ?

अपनापन जोड़ें रे।
सपने अंगूरी के ॥



कंठ भरी ध्वनियाँ

गोद भरा दर्द और
मुट्ठी भर खुशियां ।

कहने को सब कुछ ही
झूठा भी है सच ही ।
अपना-अपना हिस्सा
ज्यों-ज्यों जाता पच ही।।

धरती पर धूल और
सीपी पर मणियां ।

हर कल से आशा है
आज सतत् प्यासा है ।
जो पीछे छूट गया
मुड़देखो झांसा है ।।

सागर भर नीर और
जाल भर मछलियां ।

चीखें—चीत्कारें सब
लगती झंकारें सब ।
धरकर सत्कार रूप
आती दुतकारें सब ।

गगन भरा गीत और
कंठ भरी ध्वनियां ।



सुधियों के मोर

विम्ब विम्ब चादनी
किरण-किरण डोर।
नयनों में नाच रहे
सुधियों के मोर ॥

बूंद-बूंद मदिरा की
घिर आये बदरा की।
छोर-छोर भीगी है
जीवन के चदरा की ॥

सांस-सांस रागिनी
स्वप्न-स्वप्न घोर।
गीतों में घुली-घुली
कजरा की कोर ॥

चटख चटख कलियों में
भटक कुंज गलियों मे।
छवियां ही छवियां है
बिखरी रंग रलियों में ॥

कुंज कुंज कामिनी
झपक झपक शोर।
बहकी-सी बांसुरियां
फिरता-सा चोर ॥

लहर लहर जाय पवन
बिखर बिखर जायें सुमन।
पाहुन मधुमास आज
पाहुन है नन्दन वन ॥

छन्द-छन्द यामिनी
भाव भाव भोर।
देख रही ब्रजललना
कान्हा की ओर ॥

पुरवाई डोलती फिरे गाम-गाम

जाने क्या लेती है नाम ?
पुरवाई डोलती फिरे गाम-गाम ॥

देखती दिशाओं में
खोज रही राहों में।
पूछ रही गलियों को
भीच-भीच बाहों में ॥

पल-भर ना लेती विश्राम।
पुरवाई डोलती फिरे गाम-गाम ॥

अंतर की अकुलाई
चंचल मन, व्यस्त बडी।
जाने किन स्मृतियों पर
तैर रही घड़ी-घड़ी ॥

जैसी सुबह वैसी शाम।
पुरवाई डोलती फिरे गाम-गाम ॥

फागुन की वहकाई
सावन के हाथ छली।
पतझड़ की गोदी में
वासन्ती नार पली ॥

रूठे ज्यों राधा के श्याम।
पुरवाई डोलती फिरे गाम-गाम ॥

बावरा पपीहरा

दर्द से भरा-भरा
बावरा पपीहरा ।
हर तरफ निहारता,
वक्त से डरा-डरा ॥

व्यथित हृदय कैसा रे ।
आग जले जैसा रे ।
रोज सहा जाता है
दु:ख कहीं ऐसा रे ॥

आस से घिरा-घिरा
आस भरा जीयरा ।
दूर-दूर देखता
दृश्य ज्यों हरा-हरा ॥

दिन पर दिन बीते रे ।
रातें सब रीतें रे ॥
जाने किस ओर पिया ?
बोल कहां जीते रे ॥

सांस पर तिरा-तिरा
प्यास का सिरा-सिरा ।
ऊंचाई ना पता
दिशा दिशा फिरा फिरा ॥

एक याद शेष रे ।
एक धुन विशेष रे ॥
नन्हीं-सी जान
चढ़ा कैसा आवेश रे ॥

हांफता, गिरा-गिरा
लक्ष्य को वरा-वरा ।
बार-बार ताकता
प्यार को जरा-जरा ॥



हाथों में ले ले पतवार

मछुआ रे।
पाल तनी नैया-रे।
सागर की छैंया रे।
हाथों में ले ले पतवार ॥

बोल जरा भैया !
हैया - रे - हैया ।
लहरों की ताल बजे,
नाचे पुरवैया ॥

मितवा रे !
प्यास पड़ी पैंया रे।
सुन ता-ता – थैया रे।
मौसम की करले मनुहार ॥

गीत घिरा घेरा
सुधियों का फेरा ।
ऐसे में डूब रहा
कैसे मन तेरा ॥

मनुवा रे।
बोलता पपैया रे।
समय की बलैया रे ॥
मुसकानें ओठ पर उतार ॥

आस हुई पूरी
अब कैसी दूरी ?
कैसी शंकाएं ये
कैसी मजबूरी ॥

दुखिया रे।
साथ ही कन्हैया रे।
बांसरी बजैया रे।
तेरा तो बेड़ा है पार ॥



ग्राम्य भोर

चहकी रे सांवरी चिरैया ।
खूंट बंधी रंभाई गैया ।।

आपस में बतियाए धान भरे खेत ।
चांदी के चूरे-सी चमके रे रेत ।।

धूप धुली पास की तलैया ।
तट छोड़े मछुए की नैया ।।

घर घर मे चक्की पर घूम रहे गीत ।
थिरकती बिलोवनिया तिरता नवनीत ।।

पनघट पर छुमक छुमक छैया ।
मन्दिर में स्वर भरे गवैया ।।

बैल चले बांध गले घन्टी-जूआ ।
श्रम में डूबा किसान बहता कूआ ।।

किरण-किरण ले रही बलैया ।
बांसरी बजाती पुरवैया ।।

भीड़ भरे शहर में अकेला रे

साथ लिये सासों का थैला रे।
भीड़ भरे शहर में अकेला रे ।।

जाने-पहचाने पथ, घूमी-सी गलियां,
चाहा-सा चिन्ह-चिन्ह, भोगी रंगरलियां ।।
बिखरे बाजार, जड़े चौखट चौराहे,
देखे-से दृश्य की अदेखी-सी दुनियां।

रग धुले कपड़ों का मैला रे।
भीड़ भरे शहर में अकेला रे ।।

अपना ज्यों सपना, हर सपना ज्यों अपना।
स्मृतियां भी सीख गईं साख समय छुपना।
कुंठित आकाश लिये अवगुंठित प्यास
कब तक विश्वासों के वीतराग जपना ।।

जीभ चढा स्वाद हर कसैला रे।
भीड़ भरे शहर मे अकेला रे ।।

खंडहर-से गीत उड़े, रोगन से राग
धूप तरल, रूप गरल, पानी में आग।
सुधि भूले सावन ये फागुन-मधुमास,
दीपक की लौ पर ये कैसे है दाग़ ।।

वायु ही विरक्त जहर फैला रे।
भीड़ भरे शहर में अकेला रे।



नागिन ना छोड़े रे चन्दन का वन

वीन पर सपेरे की हार गई धुन।
नागिन ना छोड़े रे चन्दन का वन ॥

ऐसी मोहक सुगंध
जैसा संगीत ।
सुधि भूले सास रही
विष-वर्णी प्रीत ॥

डाल-डाल घूम रही सूंघती सुमन।
नागिन ना छोड़े रे चन्दन का वन ॥

जंत्र-मंत्र-तंत्र सभी
निष्फल-निष्काम ।
हार गई युक्ति
यत्न आया ना काम।

नये-नये वृक्षों पर लिपटे दिन-दिन।
नागिन ना छोड़े रे चन्दन का वन ॥

भूल गई पगली। खुद
अपना संसार
बांबी में बेसुध उस
मणिधर का प्यार ॥

सुख-सौरभ डूबी-सी, उलझा तन-मन।
नागिन ना छोड़े रे चन्दन का वन।



फागुनी वयार चले............

फागुनी वयार चले
प्यार जले ।
आजा निरमोही तू
नीम तले
सांझ ढले ॥

मनुहारें आज मान
गूंजे पुरजोर गान
पायल में उलझादे
मुरली की मुक्त तान

कंगना खनकाजा रे ।
बिंदिया दमकाजा रे ।
अंसुवन से बोझल ये
अंखियां चमकाजा रे ।

यौवन के द्वारे यह
देह छले ।
आजा निरमोही तू
नीम तले
सांझ ढले ॥

हरियाए रंग-राग
लहराये मधुर फाग
धुनके हर ओर चंग
भड़काए विरह आग

अंग तो लगाजा रे ।
पौरुष छलकाजा रे ।
कोरी चूनर पर
रंग धार ढुलकाजा रे ॥

रोम-रोम गरमाया
सांस जले ।
आजा निरमोही तू
नीम तले
सांझ ढले ॥



ज़हर था, पर पी गया सो-पी गया

बस प्रबल विश्वास के आवेश पर,
ज़हर था, पर पी गया-सो पी-गया ।।

यह प्रसादी प्रथम मन्थन से मिली जो ।
राह के अवरोध, दुख, नैराश्य-पीड़ा ।।
पी न जाता तो बड़ी अप्राप्य ही थी ।
बांझ धरती पर चली यह जीव-क्रीड़ा ।।

आज फिर इस आस्था के जोर पर ।
अधर था, पर सी गया सो-सी गया ।।

विकट झंझावात में यह चेतना थी ।
लग रहा था ज्यों अंधेरा ही अटल है ।।
शंख लेकर ओठ से जब श्वास खींचा ।
तो हुआ अनुमान, शिव कितना प्रबल है ।।

यह युगों का मैल अंधियारा कि जैसे—
गटर था, पर छीगया सो छीगया ।।

अब मिलेंगे रत्न, अब कौस्तुभ मिलेगा ।
श्वेत ऐरावत, अजय उच्चैश्रवा भी ।।
भगवती लक्ष्मी, अजर धन्वतरी प्रभु ।
मोहिनी मुस्कान, घट अमृत-स्रवा भी ।।

शंभु तो संतोष ही के शैल पर,
क़हर था, पर जी गया सो-जी गया ।।

घांट बंधी नैया की छोड़ रही डोरी

नदिया मे ज्वार, मरी मछुए की छोरी।
घाटबंधी नैया की छोड़ रही डोरी ।।

जल में उठती उमंग
मन मे उन्मेष ।
लहरों को देख-देख
बिखराए केश ।।

बैठ कर तरंग चली चांद पर चकोरी।
घाट बंधी नैया की छोड़ रही डोरी ।।

जाने क्या गाती है ?
खाती हिचकोले ।
जाल भर मछलियों से
अपनापन तोले ।।

मन में तो इन्द्रधनुष, चुनरी तक कोरी।
घाट बंधी नैया की छोड़ रही डोरी ।।

यह झंझावात और
पूनम की रात ।
असमय आखेट चली
मंजु-मृदुल गात ।।

जाने उस पार कौन सिखलाए चोरी ।
घाट बंधी नैया की छोड़ रही डोरी ।।



मन वृन्दावन

मन वृन्दावन, कान्हा है विश्वास रे।
सुधियां सखियां और राधिका प्यास रे।।

गीतों के है कुंज, कामना की कलियां।
संकल्पों की राह, भावना की गलियां।।
ध्यान कदंब समान, साधना कालिन्दी,
विविध विचारों की उड़तीं विहगावलियां।।

जीवन ज्यों उपवन, मस्ती मधुमास रे।
सुधियां सखियां और राधिका प्यास रे।।

निश्चयं का गिरिराज, आस्था के मन्दिर,
सुख-दुख भरे विहार दृश्य अभिनव सुन्दर।
अभिलाषा वन-काम, प्रेम है वंशी-वट,
भक्ति रंगीला-रास, इन्दु दृग के अन्दर।।

धड़कन धीमा राग वांसुरी सांस रे।
सुधियां सखियां और राधिका प्यास रे।।

साहस ही बलराम, ग्वाल उत्साह सबल।
दुर्बलताएं दैत्य, कंस विद्वेष प्रबल।
त्याग तपोबल नन्द, यशोदा दया-क्षमा,
उद्धव ज्ञान-विवेक, धर्म अक्रूर अटल।

देह स्वयं व्रज-मंडल का आभास रे।
सुधियां सखियां और राधिका प्यास रे।।



रस्ते में पायलिया छुमक उठी छुन्

सुर अपना चूक गई वंसी की धुन।
रस्ते में पायलिया छुमक उठी छुन् ॥

पनघट से लौट रही
बीतती विभावरी ।
संकड़ी थी कुंजगली
धीमे थे पांव री ॥

चौंक उठी छलिया की आहट को सुन।
रस्ते में पायलिया छुमक उठी छुन् ॥

दृष्टि गई झुरमुट में
चित्त गया गांव री।
एक ही इशारे में
हार गई दांव री॥

आज कहां आये थे राधा के गुन ?
रस्ते में पायलिया छुमक उठी छुन् ॥

पलभर पथ-भूली-सी
रुकी रही राह री।
ओठों तक चढ आई
अन्दर की दाह री।

हो रही करेजवा में कैसी कुन-कुन ?
रस्ते में पायलिया छुमक उठी छुन् ॥

पनिहारिन को पायल ने बदनाम कर दिया

माटी की गगरी ने लाज निभाई लेकिन,
पनिहारिन को पायल ने बदनाम कर दिया ।।

पूरी रात प्रतीक्षातुर काटी नयनों में,
आखिर, जब नक्षत्र भोर का उदय हो गया ।
तब पनघट की ओर चली धीमे पग धरती,
आधे रस्ते तक सारा संकोच सोगया ।

साथ दिया अंधियारे ने हर सपने का पर,
आशाओं का ऊषा ने अपमान कर दिया ।।

उत्कंठा ने बन्ध तोड डाले धीरज के,
चुनरी ही से उलझ चरण ने ठोकर खाई ।
झन्न हुई-झंकार, गिरी चौराहे आकर,
खिड़की-खिड़की ने चेहरे पर आंख लगाई ।

निर्लज्जा ने खूब सहारा दिया लगन को,
सबल साध को घूंघट ने हैरान कर दिया ।

उधर दूर अमराई में बज रही बांसुरी,
इधर बावरी जन-जन में हो गई उजागर ।
मुंह लटकाये चली अवश अपने घर वापस,
हंसी उभर आई दीवारों के अधरों पर ।

आहों ने तो सींचा अरमानों का उपवन,
मधुमासों को गीतों ने वीरान कर दिया ।।

कठपुतली नाचेरे

कठपुतली नाचे रे कच्ची डोर पर,
धूप छांव का मंच, समय के जोर पर ।।

यह राजा यह रंक बन गई ।
अभय और आतंक बन गई ।।
यही दया, यह ही निर्दयता ।
खुद निशंक खुद शंक बन गई ।।

नया रूप ले नये-नये हर दौर पर,
कठपुतली नाचे रे कच्ची डोर पर ।।

अनचाहे कौतुक कौशल सब ।
खेले खेल अनोखे जब-तब ।।
परवश भाव—भंगिमा—करतब ।
संकेतों पर हिलें अंग सब ।।

ज्यों बिजली की चमक घटा घनघोर पर,
कठपुतली नाचे रे कच्ची डोर पर ।।

अंधी आंख देखती सपने ।
कौन पराये—कैसे अपने ?
क्रम से चलती जाय कहानी ।
हंसे होठ मन लगे तड़पने ।।

घड़ी खड़ी इस ओर, घड़ी उस छोर पर,
कठपुतली नाचे रे कच्ची डोर पर ।।



लगता है सावन से बादरिया रूठ गई

घिर-घिर कर आती पर बिन बरसे जाती है।
लगता है सावन से बादरिया रूठ गई।।

आज तक मृदंगों को धुनकाती आती थी।
चपला की पायलिया झमकाती आती थी।।
गाती थी गीत झूम-झूम कर मल्हारों के,
तान उठा टीप तलक अंबर कंपाती थी।।

जाने अब कतराई गुमसुम क्यों रहती है?
जैसे फिर कान्हा से राधा की टूट गई।।

पनघट से आई पर रीती है गागरिया।
जोगन सी ओढ़ी है मटमैली चादरिया।।
जाने किस पापी को ललचायी दृष्टि लगी।
पास खड़े प्रीतम को ढूंढ़ रही बावरिया।।

कैसी अनजानी बन अंबर में घूम रही।
मानो इस धरती से हर ममता छूट गई।।

ऊंचे गिरिशृंगों से कब तक मुंह मोड़ेगी?
मुरझाये बागों का कब तक दिल तोड़ेगी?
कबतक ना छोड़ेगी अपनी यह नासमझी।
सूने वीरानों में कब तक यों दौड़ेगी?

इतना तो सोच अरी! भावी क्या आंकेगी?
अपना ही बनजारा बनजारिन लूट गई।।



हर धड़कन जप नाम तपस्वी मन मेरा

सांस सुमरनी क्षण-क्षण फिर जाता फेरा।
हर धड़कन जपनाम, तपस्वी मन मेरा ॥

ममता मध्याकाश, वृत्तवत प्रेम प्रबल।
आशा कण-कण व्याप्त, काष्ठ विश्वास सबल ॥
ज्यों कान्हा के महारास गोपी घेरा।
नृत्य करे दिन-रात सुहागन सुख-विह्वल ॥

पुण्य निसरनी प्राण चढ़े प्रिय कर प्रेरा।
सांस सुमरनी क्षण-क्षण फिर जाता फेरा ॥

रेंहट फिरे ज्यों अनथक अर्घ्य-पिपास लिये।
वैसे अमृत डूब-डूब यह तार जिये ॥
जैसे अपनी एक परिधि में यह पृथ्वी।
घूम रही है सम्मुख अपना सूर्य लिये ॥

वाग्-विचरणी ने निश्चित्-सा पथ हेरा।
सांस सुमरनी क्षण-क्षण फिर जाता फेरा ॥

श्रद्धा सूत्र, पिरोये निष्ठा ने मनके।
प्रतिभा-प्रज्ञ-प्रमाण-ज्ञान-गुण गिन-गिन के ॥
ऊपर सत्य-सुमेरु चढ़ा शिव-संकल्पी।
घूम-घूम रह जायें यही दिन जीवन के ॥

तुलसी वर्णी रूप, वैजयन्ती घेरा।
सांस सुमरनी क्षण-क्षण फिर जाता फेरा ॥



सपने हुए सयाने जिसके देश में

मनवा ! मत जाना फिर भूले भावावेश में।
सपने हुए सयाने जिसके देश में ।।

गागर-घाट जलाशय रीते
रीते सांझ-सवेरे।
प्यासे-प्यासे फिरें पखेरू
खोजें नये बसेरे ।।

काली-काली लगे रोशनी,
उजले लगें अंधेरे।
फैली है हर ओर जुगुप्सा,
घाव हुए सब गहरे ।।

चकवा ! मत जाना क्षणजीवी उस उन्मेष में,
अपने हुए पराये जिस परिवेश में ।।

ऋतुएं रहती हैं गुमसुम सी,
मौसम फिरे अकेला।
किसी जन्म कैदी-सी बेबस,
प्रीति-प्रणय की बेला ।।

अट्टहास शंकाकुल गूंजे
गूंजे गूढ़ गहारें।
गली-मुहल्ले अस्त-व्यस्त सब
किसको-कहां पुकारें ?

अंसुवा मतजाना अनजाने ही आवेश में,
दफने हुए पुराने सुख स्मृति शेष में ।।

रोज-ही-रोज तुमको पुकारे किया

तुम न आए, न आए, न आए कभी
रोज-ही-रोज तुमको पुकारे किया ।।

एक आशा अनेको निराशा भरी
ज्यों पिपासा किसी चातकी की हरी ।
राह देखा करे ज्यों हरिन की मृगी
बाट प्रियतम की देखे कोई सुन्दरी ।।

तुम न छाए, न छाए, न छाए कभी
व्यर्थ ही मन मल्हारें मल्हारे किया ।।

दर्द की उम्र लम्बी हुई-सो हुई
पर खुशी आज भी है नयी-की-नयी ।
प्यार सौंपूं तुम्हे तो तसल्ली मिले
और बातें कई जो गई-सो-गई ।।

कुछ कहोगे, कहोगे, कभी-ना-कभी
रात पर रात क्या-क्या विचारे किया ।।

वक्त की पर्त-पर-पर्त चढ़ती रही
प्यास आकाश-सी रोज बढ़ती रही ।
तुमने जाने क्या देने का वादा किया
जिन्दगी, और मुझसे ही लड़ती रही ।।

स्नेह दोगे-ही-दोगे सभी-का सभी
बस इसी लोभ में ही निहारे किया ।

फिर गीतों ने तुम्हें पुकारा

सोंधी-सोंधी शाम
ओठ पर ले आई है नाम तुम्हारा
फिर गीतों ने तुम्हें पुकारा ॥

सुनराये आकाश तले चम्पा फूली है ।
नये नीड़ पर बया बबूलों में भूली है ॥
वन-पांखी की पांति उड़ रही क्षितिज छोर पर
सरिता का उन्माद दीखता अधिक जोर पर ॥

भूली-भूली याद
बांध लाई है कोई मूक इशारा
फिर गीतों ने तुम्हें पुकारा ॥

बहकी हुई बयारों पर तिर रहीं मल्हारें ।
जैसे नई उमंगों को अरमान दुलारें ॥
कैसा है शृंगार सृष्टि का दृष्टि लगे ना
सोया हुआ विषाद चौंक कर कहीं जगे ना ॥

मीठी मीठी तान
छेड़ता बंसी पर कोई बंजारा ॥
फिर गीतों ने तुम्हें पुकारा ॥



किसने दीप जलाया मांझिल रात को

किसने दीप जलाया मांझिल रात को ?
कौन समझ पाया इस बोझिल बात को ?

> धन्यवाद दूं किसको-किसका अतुल अनुग्रह मानूं ?
> भीड़ भरे चौराहे किसको अपना कह पहचानूं ?
> किसको श्रद्धा करूं समर्पित - किसको शीश नवाऊं ?
> पूजा थाल सजाया पर भगवान कहां मैं जानूं ?

किसने दिया सहारा थकते हाथ को ?
कौन सहज ही झेल गया आघात को ?

> ज्योति और जीवन की किसने करदी आज सगाई ?
> कहा किये सत्कृत्य-पुण्य जो करने लगे कमाई ?
> किसने पुनः व्यवस्थित करदी विशृंखलित उमंगे ?
> किसने यह आनन्द अभय की सुन्दर हाट सजाई ?

किसने किया किनारे झंझावात को ?
कौन जीत में बदल गया हर मात को ?

> कण-कण में गुंजार गीत की अणु-अणु मे झंकारे,
> धीमी-धीमी सास बासरी, नस-नस मे टंकारे ।
> दूर दूर तक दृश्य मनोहर निकट शान्ति की लहरें,
> मुख पर शिव, हाथों में ब्रह्मा, हृदय विष्णु हुँकारें ।

किसने किया उजाला काले गात को ?
कौन दे गया अमृत की सौगात को ?



दीप शिखा सम सारी रात जला करता हूँ

जाने किस अँधियारे को आलोकित करने ?
दीप शिखा सम सारी रात जला करता हूँ ।।

छीज रहा है स्नेह, झुलसती बाती पल-पल ।
झंझाओं की मची हुई है भारी हलचल ।।
ना जाने कैसा झोंका अस्तित्व मिटा दे ?
कौन शलभ अनचाहे ही कर जाए घायल ?

ऐसा कौन भटकता है उर के अरण्य मे ?
जिसे दिखाने राह, सदा मचला करता हूँ ।।

कुन्दन-सी काया मे सांसे है काजल की ।
क्या जाने कोई मेरे इस पीड़ालय की ?
दूर-दूर तक उजियाला करता हूँ लेकिन ।
जाती नही अमावस खुद अपने ही तल की ।।

कैसी हाय ! विवशता है, होकर समर्थ भी
तम की ही गोदी में रोज पला करता हूँ ।।

जाने कितनी मना चुका ससार दिवाली ।
खाली कर-कर के मेरी अमृत की प्याली ।।
किन्तु किरण मेरी ही मेरे काम न आई
रही पूर्ववत् आशाएं काली-की-काली ।।

फिर भी है विश्वास अटल ऐसा कुछ बाकी ।
जिसको लिये स्वयं को नित्य छला करता हूँ ।।



नवल-कल्पना के पंखों पर उड़ती है मन की गौरैया

नवल-कल्पना के पंखों पर उड़ती है मन की गौरैया,
व्याकुल-सी खोजा करती है, जाने किस मधुवन की छैंया ?

सतरंगी-आभास लिए स्मृतियों के पट पर,
भटक रही है एकाकी अम्बर के तट पर।
किस कछार पर बिखर गये सपने अनपूरे,
प्यास खड़ी ललचायी जाने किस पनघट पर ।।

कौन साध हरियाई, पाकर पावस की भीगी पुरवैया।
व्याकुल-सी खोजा करती है, जाने किस मधुवन की छैंया ।।

लहराये धरती-पर जब धानी-चूनरिया,
हर मचान पर गूंज उठे मीठी बांसुरिया।
थिरक उठें कल-कल करती लहरें सरिता की,
कुंज-कुंज मे कूक उठे कोकिल बावरिया ।।

तृष्णा से तकती है पगली, जीवन की हर भूल-भुलैया,
व्याकुल-सी खोजा करती है, जाने किस मधुवन की छैंया ?

मचल-मचल कर रह जाते उन्मेष अधर पर,
जाने क्या कहने को आतुर है अन्तः स्वर ?

कैसी जकना जगा गई यह प्रीत निगोड़ी ?
उछल रही अविराम भावना के इंगित पर ।।

टोना-सा कर गया हाय ! नन्ही आशा पर कौन कन्हैया ?
व्याकुल-सी खोजा करती है जाने किस मधुवन की छैंया ?

नीड़ नहीं है, निशा न जाने कहां कटेगी ?
नई भोर की नई वहारें कहां वटेंगीं ?
किस डाली पर कुम्हलाया उल्लास खिलेगा ?
किस मंजिल पर पीड़ाओं की भीड़ छंटेगी ?

अनव्याहा विश्वास न जाने कहां सजायेगा सुख-शैया ?
व्याकुल-सी खोजा करती है, जाने किस मधुवन की छैंया ?



उन गीतों को गाकर मन बहला लेता हूं

जिनसे तेरी स्मृतियों का सम्बन्ध जुड़ा है,
उन गीतों को गाकर मन बहला लेता हूँ ।।

वैसे तो हर रात विरह की कट जाती है,
लेकिन कुछ क्षण ही जाने क्यों लगते भारी ?
जिनमें जीवन का अस्तित्व सिमट जाता है,
कुछ-से-कुछ हो जाती है यह दुनियां सारी ।।
ऐसे हर उन्माद भरे दिल के दौरे को,
सतत् स्मरण की धारा से नहला लेता हूँ ।।

कभी-कभी जब बंध तुड़ाकर मुक्त भावना,
किसी अजाने द्वीप-ओर उन्मुख होती है।
जहां गूंजती छलिया की वरजोर मुरलिया,
आंख जहां रोती है, तो सुख से रोती है ।।
ऐसे उड़ते हुए उमंगों के पंछी को,
सपनों के उपवन तक ही टहला लेता हूँ ।।

यह विछोह चिर तृपावंत मेरी थाती है,
यह अंधियारी रात मुझे राका से प्यारी।
इससे मेरी आशा का विश्वास अमर है,
इसमें समा गई हैं मेरी खुशियां सारी ।।
इसीलिये हर बार मिलन की आतुरता को,
भीनी-भीनी सुधियों से सहला लेता हूँ ।।



दृश्य सुधियां ये कैसे दिखाती रही

रात भर चांदनी बड़-बड़ाती रही
हर चकोरी विकल फड़फड़ाती रही।
तुम न आए बुझाने तृषा प्यार की
दृश्य सुधियां ये कैसे दिखाती रही ।।

छा गया पीर पर लाज का आवरण
जब कलाई किसी शंक ने थाम ली।
साधना स्तब्ध थी, कामना रो पड़ी,
जब निराशा की आशा ने हठ मान ली ।।

हर पलक की ललक गिड़गिड़ाती रही
जिन्दगी की कसक चरमराती रही।
तुम न आए कलाई मेरी थामने,
बांह मेरी ही मुझको सताती रही ।।

फिर उमंगों का उठता हुआ कारवां
एक अनजान-सी राह में खो गया।
धड़कनें पूछती है दबी सांस से
बावरी ! फिर तुझे आज क्या हो गया ?

भावना की नजर छलछलाती रही
दूर कुंठा खड़ी खिलखिलाती रही।
तुम न आए खुशी की बरातें लिये
मुझको मेरी हंसी ही रुलाती रही ।।

हर घड़ी आंसुओं ने संभाला मुझे
मृत्यु की हर गली से निकाला मुझे।
देख कर यों अनाश्रित मेरी साध को
कुछ अधूरे से सपनों ने पाला मुझे ।।

होठ पर अनकही थरथराती रही
भय भरी आंधियां सरसराती रहीं।
तुम न आए मुझे अंक में बांधने
मुझको परछाई, मेरी डराती रही ।।



सुधियों ने सतरंगी इन्द्रधनुष ताना है

पावस की सांझ, खुली आंखों की पलकों पर,
सुधियों ने सतरंगी इन्द्रधनुष ताना है ।।

सुरभित संसार है बहार की बयारों से ।
वीणा के तार बारबार झनझनाते हैं ।।
दूर कहीं दिखती हैं आशाएं मुसकातीं ।
मन में मनुहार के विचार सनसनाते है ।।

आज गईं मांज विभा पूजा के सब बर्तन ।
साधना सजी है फिर कौन यज्ञ ठाना है ।।

वन से घर लौटते वियोगी चरवाहे ने ।
सोहिनी के सरगम पर तान को उठाई है ।।
यह धुन, एकाकीपन, स्वप्नों की अल्हड़ता,
आस-पास घूम रही किसकी परछाई है ।।

बजती है झांझ औ, मृदंग इन दिशाओं मे,
ग्वालिन की पायल में रास का बहाना है ।।

मुक्त हैं उमंगें औ, मधु झरता मौसम-नम ।
कामना सयानी का यौवन उमगाया है ।।
स्निग्ध समय, दग्ध हृदय हाथ में लिये हैं हम,
पास की तलाई में पंकज मुरझाया है ।।

अभिलाषा बांझ, खड़ी अंतर अकुलाई सी ।
संयम की सीमा पर मन को समझाना है ।।

धूप के साथ बरसात होने लगी

याद से याद की बात होने लगी
बिन मिले फिर मुलाकात होने लगी।
दर्द के मेघ में मुस्कराये जो तुम
धूप के साथ बरसात होने लगी ।।

क्या कहूं, क्या कहा ? क्या कहूं, क्या सुना ?
एक धागा सिया एक धागा बुना।
रोशनी को पीया, रोशनी को जिया।
प्यार होता गया कुनकुना-कुनकुना ।।

भाव की भीड़ बारात होने लगी
रात गम की मिलन रात होने लगी।
एक खामोश शहनाई बजती हुई
मौन गीतों की खैरात होने लगी ।।

कुछ बहा, कुछ रहा, पर हृदय भर गया,
ज्वार आया तो कुछ काम ही कर गया।
चन्द्रमा तक लहर ना गई हो मगर
चन्द्रमा तो लहर तक सफर कर गया ।।

चांदनी कुछ नये बीज बोने लगी
फूल खिलने लगे साख होने लगी।
देखते-देखते ही बहारें खिलीं
ज्यों सुगंधी कोई गांव धोने लगी ।।

दूरियां [illegible] लाई है खुद मंजिलें,
पास साये कई हौंसलों के हिलें।
बांह है बांह में, जुल्फ की छांह में
होठ-से-होठ हर वार छूटें-मिलें॥

प्यास पल-पल प्रणय को विलौने लगी
आस सांसों में मोती पिरोने लगी।
जान-से जान होने लगी तरबतर,
जिन्दगी जिन्दगी को भिगोने लगी॥



लगता यह पुरवाई अलकें छू आई हैं

आज फिर अचानक ही याद आ गये हो तुम।
लगता यह पुरवाई अलकें छू आई है ॥

आस-पास उड़ती थी गोरैया
भोर ही अटारी पर कौआ मँडराया था ॥
आंगन के खूंट बंधी कजरी रंभाई थी।
राह के भिखारी ने सुर बहार गाया था ॥

आज फिर अकारण ही साध खड़ी है गुमसुम,
जैसे संवाद कोई धड़कन सुन आई है ॥

किरण-किरण गुदगुदा गई है अलसाया मन।
पलकों पर स्मृतियों की परतें चढ आई है ॥
परकटे पखेरू-सा याचक यह दृष्टि दरश
देख लो! अधीरता कहां तक बढ आई है।

आज जो अजाने ही ओठ पर चढ़ी है धुन,
वनजारिन गीतों के गांव घूम आई है।

मन के घर मन पाहुन, उफना अनुराग सिंधु,
वीराने दिखते सब वृन्दावन बागों से,
पलपल पर पुलक-ललक, उठती रोमांच लहर
सांस-सांस खेल रही अनदिखती आगों से।

आज फिर तुम्हारी अनुपस्थिति का बिखरा गम
पलकों में पगली यह छवियां भर लाई है।



साथ तुम्हारा जो मिल जाता

पतझड़ को मधुमास बनाता,
सूने वीरानों में गाता।
स्वर्ग हृदय से दूर कहां था?
साथ तुम्हारा जो मिल जाता।।

हंसता तो खिल जाती कलियां,
पग-पग पर झड़ती फुलझड़ियां।
ये उदास अनजानी राहें,
बन जाती वृन्दावन गलियां।।

तुम्हे राधिका नाम दिलाता,
और स्वयं कान्हा बन जाता।
मरुथल भी लगता व्रज-मंडल,
पग-दो-पग जो संग चल पाता।।

प्रीत स्वयं बन जाती पूनम,
सम्मुख होता जो चंद्रानन।
अनहद की झंकारें उठतीं,
जंगल हो जाता नन्दनवन।

नयनों से आशा बरसाता,
सांसों की वंसी सुनवाता।
यह धरती क्या होती जाने?
वह क्षण ही तुमको बतलाता।।

मिल जाती मंजिल बाहों में,
घुल जाता अमृत चाहों में।
हो जाता हर समय सुनहरा,
अलकों की शीतल छांहों में ।।

एक नया संसार सजाता,
एक नया इतिहास रचाता ।
उदाहरण बन जाता जीवन,
जो तेरा इंगित पा जाता ।।



इसलिए सन्देश भेजा है सवेरे

रात फिर आवाज़ देगी
और तुम आओ-न-आओ
इसलिए सन्देश भेजा है सवेरे।

कल तुम्हारे नाम का निकला हुआ
हर सुख यहां आंसू गिराकर चल दिया है।
और वैसे ही गये दिन पूर्व के भी
हर प्रतीक्षा ने गरल ही तो पिया है।।

रागिनी फिर साज देगी
और तुम गाओ-न गाओ
इसलिए सन्देश भेजा है सवेरे।

कनखियों से झांकते तारे
मुझे कुछ पूछते हैं एक टिचकारी लगाकर।
चन्द्रमा मेरी दशा पर रोज ही हंसता रहा है
छेड़ जाती हैं हवाएं गात छूकर।।

याद कोई राज़ देगी
और तुम लाओ-न-लाओ
इसलिए सन्देश भेजा है सवेरे।

भीड़ से डरता नहीं मैं
भय मुझे है शांति से तनहाइयों से
रोक दूं तूफान दोनों हाथ से पर
बंध गया हूँ महकती अमराइयों से

गंध फिर आग़ाज देगी
और तुम छाओ-न छाओ
इसलिए सन्देश भेजा है सवेरे



तुम हमें याद करते हुए सो गये

हिचकियां आज आती रहीं रात भर,
तुम हमे याद करते हुए सो गये।

दीप सी देह जलती रही है मगर,
तुम शलभ-सा समर्पण नही कर सके ।।
यों लुटाया बहुत स्नेह बाजार में,
रिक्त प्याला हमारा नहीं भर सके ।।

लुट गई हर धनी आस विश्वास में,
पास आते हुए स्वप्न तुम हो गये ।।

यों रुलाना नही रीति है प्यार की,
पर तुम्हें पीर का ज्ञान है ही कहां ?
उस जगह न्याय मागे तो किससे भला,
जान से खेलना ही खुशी हो जहां ।।

मन उलझता रहा हर नई घात पर,
तुम सताते-सताते स्वयं खो गये ।।

प्यार करके हमे कुछ मिला तो सही,
तुम नही तो तुम्हारा विरह साथ है ।
इस तरह सिलसिला कुछ चला तो सही,
जिन्दगी मे रुकावट बुरी बात है ।।

आंख लगना सकी फिर नये प्रात तक,
तुम झलक छोड़ कर वेखवर हो गये ।।

जाने तुम बे-भान हुए ? या मैं खुद ही अनजान बन गया

कल तक था प्रत्यक्ष हमारा प्यार, आज अनुमान बन गया।
जाने तुम बे-भान हुए ? या मैं खुद ही अनजान बन गया ।।

स्वप्नों का संसार सदा स्मृतियों में रहता,
यों, यथार्थ से उसका कोई मेल नहीं है।
लेकिन याद संजोये रखना किसी स्वप्न की,
काम कठिन जो नही, तो कोई खेल नही है ।।

स्मरण सदा तेरा, मेरी सुख रातो का व्यवधान बन गया।
जाने तुम बे-भान हुए ? या मैं खुद ही अनजान बन गया ।।

कोई भी हो राह, बटोही मिल जाते हैं,
जाने कब-किससे मन का नाता जुड़ जाये ?
करदें कब लाचार भावनाएं अन्त. को ?
जाने कैसी छांव देखकर पग अड़ जायें ?

मैं सतर्कता की सीमा में, खुद अपना अपमान बन गया।
जाने तुम बे-भाग हुए ? या मैं खुद ही अनजान बन गया ।।

मैंने कब चाहा मन के सूने द्वारों पर-
आशाओं की सुन्दर वन्दनवार सजाऊँ ?
तुमने ही अनचाहे आमन्त्रण दे मुझको-
विवश किया था, विपदा में भी गीत सुनाऊं ।।

स्वर बहार का छेड़ा मेरा, पतझड़ का आह्वान बन गया।
जाने तुम वे-भान हुए ? या मैं खुद ही अनजान बन गया ।।

दुख इसका है नहीं मुझे विश्वास छल गया,
ठोकर तो जीवन में लगती ही आई है।
जब भी झोली फैलाई अनुरोध मान कर,
पल्ले केवल पड़ी एक खोटी पाई है ।।

तेरा कंचन का आश्वासन, कैसे कंकड़खान बन गया ?
जाने तुम वे-भान हुए ? या मैं खुद ही अनजान बन गया ।।



ऋतुओं के मेले में

इनहीं में, यहीं-कहीं मेरा भी है मौसम।
झांक लूं जरा-सा इस ऋतुओं के मेले में ।।

कुहराये अम्बर की परतों को चीर।
खोज लूं दिशाओं में आंखों का नीर ।।
फूलों से, कलियों से पूछलूं जरा,
शबनम के साथ रही, कैसी थी पीर ?

ऐसा ही, इतना ही, मेरा वह मोती मन।
देख लूं बहारों के रत्न भरे झोले में।

वैसे हर राह ने छला है जीवन।
क्या तो यह फागुन और क्या वह सावन ?
ऐसा किस कुंठा से उलझा अपनत्व ?
सिहर-सिहर उठता है भीगा यह तन ।।

इतनी ही अनजाने भीड़ भरे सरगम में,
खोया अनुराग किसी छांह के अकेले में ।।

मेरी आंखों के विश्वास का प्रकाश ।
नाप चुका कितने ही धुंधले आकाश ।।
धरती का ओर-छोर, सागर का तीर।
हाय नहीं आया वह बिछड़ा मधुमास ।।

जाने किस मधुरस पर मोहित मेरा जीवन ?
मांग लूं महीनों के मन चले झमेले में ।।



हर तरफ मनुष्य को पुकारता फिरा

मुंह चढ़े मुखौटों की भीड़ से घिरा,
हर तरफ मनुष्य को पुकारता फिरा ।।

जिन-जिन को जान लिया, सारे अनजाने है,
मेले में अपना भी मीत कहीं खोया है।
पूछा है पद-पद पर नाम नये चेहरे का,
जाने किस चादर में प्रियतम वह सोया है ।।

दृष्टि जहां दौड़ी अनुमान था निरा,
हर तरफ मनुष्य को पुकारता फिरा ।।

पगडंडी-पथ-विस्तृत चौड़े चौराहे पर,
चीख-चीख टेर सभी ओर तो सुनाई है।
सबने मुंह खोले है, सब ही कुछ बोले हैं।
मन को पर कोई तसवीर नहीं भाई है ।।

भूल गई नाम किसी एक का गिरा,
हर तरफ मनुष्य को पुकारता फिरा ।।

विश्व-वायु-मंडल में मेरा स्वर गूंज रहा,
श्रुतियां ना सुन पाए, अन्तर तो सुनता है।
लेकिन सब गुप-चुप है, जान कर अजाने से,
हर कोई अपने ही बुद्धिजाल बुनता है ।।

हाथ नहीं आया विश्वास का सिरा,
हर तरफ मनुष्य को पुकारता फिरा ।।

मेरी ही प्रतिध्वनियां मुझसे पूछ रही हैं

कब तक गीत सुनाओगे इन दीवारों को ?
मेरी ही प्रतिध्वनियां मुझसे पूछ रही है ।।

सोये है सब लोग अंधेरी चादर ताने ।
हर दरवाजे पर देखा दुख का पहरा है ।।
खंडहर से हो गये सभी सुख स्वप्न अचानक,
संस्कृति का हर घाव आज कल से गहरा है ।।

कब तक प्यार लुटाओगे इन वीरानों पर ?
झड़ी हुई पत्तियां पवन से पूछ रही हैं ।।

रात अन्धेरी और घोर छाये हैं बादल ।
बार-बार बिजली धरती के ओंठ चूमती ।।
जीवन तो जकड़ा है पूरा नागपाश में,
प्रेत टोलियां जगह-जगह निर्द्वन्द्व घूमतीं ।।

कब तक धीर बंधाओगे लुटती राहों को ?
पद-चिन्हों से आज दरारें पूछ रही हैं ।।

रस का गाहक कौन ! [illegible] इस बेला में ?
जले हुए [illegible] पर अब [illegible] कैसा ?
[illegible] का [illegible] की [illegible] हुए,
[illegible] ?

कब तक गीत [illegible] ?
मरघट की [illegible] पूछ रही हैं ।।

[illegible]

सन्दर्भों के सूत्र

सच ही संदर्भों के सूत्र बहुत उलझे हैं।
कोई भी सत्य सहज साथ कहां आयेगा ?

जाने सम्बन्धों में कौन-कहां बैठा है ?
किसके मुख जाने यह कौनसा मुखौटा है ?
बावरे विधाता के बिगड़े इस नाटक में,
कौन-कौन नायक तो कौन पात्र छोटा है ।।

पृष्ठों पर बिखरीं हैं अधखिली वितृष्णाएं ।
कोई भी तथ्य-नया, हाथ कहां आयेगा ?

बदल रहे शब्दों के अर्थ नयी ध्वनियों में।
भाव हे विचारों में, पर बहुत उपेक्षित है ।।
धुंधला-सा स्वप्न कभी देखा था निंदियानें,
आंखों से पूछो तो आज भी प्रतीक्षित है ।।

विविध रंग-रूपों में दिखतीं परिभाषाएं ।
कोई भी कथ्य, झुका माथ कहां पायेगा ?

पूरा परिवेश-प्रकट, घूम रहा पल-पल में।
गति की प्रतिस्पर्धा में कौन खड़ा रहता है ?
कौन देख पाता है आंख से हिरण्यगर्भ ?
ऊंचे अनुभूति-शिखर कौन खड़ा रहता है ?

काई पर पांव, हिलें हाथ दो हवाओं में।
कोई भी लक्ष्य स्वतः पास कहां आयेगा ।।



कल की बीती आज कहानी बन जाती है

आनी-जानी दुनिया की है रीति पुरानी।
कल की बीती आज कहानी बन जाती है ॥
किस पर करें प्रतीति यहां प्रत्यक्ष प्रीति भी।
कुछ स्मृतियों की एक निशानी बन जाती है ॥

दोष किसी का नहीं, दायरे ही ऐसे हैं।
जिनका अपना रूप बदलता ही रहता है ॥
घटते-घटते घट जाए अज्ञात शून्य तक।
बढ़ते-बढ़ते ध्वनि तरंग जैसा बढ़ता है ॥

चाहो, ना चाहो, फिर भी इस काल-चक्र में,
हर आरे की नोक कलम बन जाती है ॥

हर रजनी की आह सुखद शबनम बन जाती,
मधुर भोर संध्या को काली हो जाती है।
परिवर्तन ही मात्र सत्य है इस जगती का,
क्योंकि सृष्टि स्थिर नहीं सतत् चलती जाती है ॥

जाने-अनजाने भी जीवन के प्रवाह में,
लहर-लहर को भँवर रोज छल ही जाती है ॥

घटनाओं का जाल, यही जीवन परिभाषा,
एक शीर्षक में अगणित अन्तर गाथाएं।
विस्मृतियों के गर्त निगलते रहते जिनको,
बाकी रह जाती है कुछ भावी आशाएं ॥

सपनों की चलती-फिरती इन छायाओं में,
स्वयं ज्योति इतिहास रूप में ढल जाती है ॥



विश्वास ने धोखा किया है

व्यथित हूँ विश्वा ने धोखा किया है।
सोचता हूँ, अब सहारा लूं, न लूं ?

लग रहा था खूब बरसेगी घटा यह,
जो गिराकर बिजलियां छितरा गई है ।।
मान-मर्यादा सभी कुछ त्याग अपनी,
मूर्खता के मोह में भरमा गई है ।।

तृषित हूँ, तट से लहर ने छल किया है।
देखता हूँ, अब इशारा दूं, न दूं ?

हाय! अनबोली लगन सकुचा गई है,
समय का कामुक-कुटिल संकेत लख कर ।।
हर खुशी मन की कृपण-सी हो गई है,
पेट को अस्तित्व अपना रहन रख कर ।।

क्षुधित हूँ, हर कौर मुंह का छिन गया है।
पूछता हूँ देह को, बल दूं, न दूं ?

बावरी आशा कुंआरी रह गई है।
भाग्य ने जाने कहां करली सगाई ?
क्रूर कुंठा कान में कुछ कह गई है,
साधना सुनकर जिसे कुछ सकपकाई ।।

भ्रमित हूँ, हर भाव ने घायल किया है।
आंकता हूँ, अग्नि को जल दूं, न दूं ?

अंधेरी रात के साये......

अंधेरी रात के साये
बहुत अपराध करते हैं।
उधर आकाश रोता है
इधर हम आह भरते हैं॥

सितारे व्यंग्य में हंसते
नजारे नाग से डंसते।
पवन के एक झोंके से
सिहर जाते हैं सब रस्ते॥

कभी कुछ श्वान चिल्लाएं
कभी कुछ स्यार रोते हैं।
मेरी कुटिया के दीपक पर
कई मेहमान जलते हैं॥

धुंआ बिन आग उठता है
समय का सांस घुटता है।
बिलख पड़ते हैं वन-कानन
प्रलय का साज जुटता है।

धरा का धीर थर्राये
उदधि में ज्वार बढ़ते हैं।
कहीं पर कांपता साहस
कहीं विश्वास डरते हैं॥

म्व चांदनी]

घिरे ज्यों दानवी माया,
फिरे ज्यों प्रेत की छाया।
कुछ ऐसा त्रस्त है जीवन,
कुछ ऐसी कष्ट में काया।।

घड़ी में मृत्यु मुसकाए
घड़ी शैतान हंसते हैं।
हिले जब काल की डाली
कुंआरे स्वप्न झरते हैं।।

जीवन की जलती राहों में

गरल धार-सी मिल जाती है, मेरी अनव्याही चाहों में।
मत पूछो क्या-क्या देखा है ? जीवन की जलती राहों में ।।

भूल रहा हूँ हर बीता पल स्वप्न समझ कर।
क्या पाओगे ? कल की बातें याद दिलाकर ।।
राही हूँ, कर्तव्य सदा चलते जाना है,
दृश्य देखता हूँ सारे अनजाना होकर ।।

धीरज का धन लुट जाता है मुक्त लेखनी की बाहों में।
मत पूछो ! क्या-क्या देखा है ? जीवन की जलती राहों में ।।

घुटते हैं मधुमास स्वयं की ही सुवास से।
बिकते हैं बाजार मात्र अपने लिबास से ।।
रह जाता है रोष हृदय में उबल-उबल कर,
कितनी है कंगाल भावना मोह पाश से ।।

कुंठाएँ बढ़ती जाती हैं, दग्ध प्रेरणा की आहों में।
मत पूछो ! क्या-क्या देखा है ? जीवन की जलती राहों में ।।

लज्जा खुद निरलज्ज खड़ी है चौराहे पर।
श्रद्धा बैठी असमंजस के दो पाये पर ।।
आशा कुछ अकुलाई, कुछ सकुचाई-सी है,
कामुकता छा गई प्रीत पर छाया बन कर ।।

साहस सीमा घट जाती है, आदर्शों के शवदाहों में।
मत पूछो ! क्या-क्या देखा है ? जीवन की जलती राहों में ।।

रजनी को अंधियारे पर अभिमान बड़ा है,
दिन उजियाला पाकर भी निस्तेज पड़ा है।
बिन बादल ही बरस रहा है नीर घटा पर,
फिर भी खाली का खाली हर एक घड़ा है ॥

बरबस ही बौरा जाती है, साधें संशय की छांहों में।
मत पूछो क्या-क्या देखा है ? जीवन की जलती राहों में ॥

खून कहां है ? पानी से जी रही जिन्दगी
कौन ठौर है ? जहां नहीं सड़ रही गन्दगी ?
मन्दिर के द्वारे मसजिद की मीनारों पर
सिसक-सिसक कर जाने क्यों रोरही बन्दगी ?

घोर निराशा छा जाती है, अन्तःस्थल के अवगाहों में।
मत पूछो ! क्या देखा है ? जीवन की जलती राहों में ॥

हाय ! आज मेरा भारत भूखा सोता है

वैभव जिसका देख स्वर्ग भी ललचाता था।
हाय ! आज मेरा भारत भूखा सोता है ।।

वृक्ष स्वयं अपने फल खुद ही खा जाते हैं,
खेतों की फसलों को जंगले चर जाते हैं।
नदियां खुद पी जाती हैं अपना ही पानी
बनजारों को बैल उन्ही के हर जाते हैं ।।

जहां कभी धरती सोना उगला करती थी।
आज वहीं का सोना मिट्टी सा होता है ।।

मानव से मानवता रहती रूठी-रूठी,
सब बातें लगती हैं सारी झूठी-झूठी।
दिन को भी सारा जग अंधियारा दिखता है,
आंखें फूटी तो घर के बांसों से फूटी ।।

जहां कभी अमृत बंटता था गली-गली में।
आज वही विष पीने को झगड़ा होता है ।।

कान हुए बहरे अपने ही गाने सुनकर,
घाव हुए गहरे, मरहम अनजाने लेकर।
बस में नहीं रहा है अब अकुलाया धीरज,
टूटा है विश्वास, चोट पर चोटें सहकर ।।

जहां कभी पाषाणों में जीवन हंसता था।
आज वही पाषाणों-सा जीवन होता है ।।

वधुओं को लूटा है उनके ही सुहाग ने।
घर-घर आग लगाई घर के ही चिराग ने ॥
हर चादर को श्याम कर दिया रंगरेजों ने,
हर चूनर को तार-तार कर दिया फाग ने ॥

जिस मधुवन में मुरली की तानें गूंजी थी,
आज वहीं बैठा मेरा कान्हा रोता है ।

चाह फली, फिसल-फिसल जाती है।

अनगिन आशाओं के ऊँचे-चिकने सुमेरु,
चढ़ने को चाह फली, फिसल-फिसल जाती है ।।

साहस-संतोष-धैर्य, उर में उत्साह प्रबल,
दृष्टि दूर-दूर लक्ष्य बिन्दु जोह आती है ।।
कुहराये-बदराये-धुंआराये मौसम में,
अपने अनुमानों का सूर्य टोह आती है ।।

मन की मनुहारों के मँहगे आकर्षण में,
बंधने को बांह खुली मचल-मचल जाती है।

कुंदन का रंग बहुत पीला चमकीला है।
आंख में अंधेरा घनघोर चकाचौंधी का।
रेखाएं स्पष्ट कहां समय की हथेली पर,
गहराया रंग चढ़ा ऋतुओं की मेंहदी का ।।

पल-पल में होते अनपेक्षित परिवर्तन में,
टूट-टूट राह नई निकल-निकल आती है।

सत्य को समर्पित यह साथ जागे सपनों में,
निद्रा में करती है मंत्रणा अचेतन से ।।
जब संज्ञाशून्य शब्द हो जाते सारे ही,
मौन सूत्र देता है अगला संवेदन से ।।

शिखर चढ़ी सुषमा के आतुर आमन्त्रण पर,
जनबोली ललक-पुलक उछल-उछल जाती है।

हृदय हथेली पर लेकर फिरता हूँ

जिसके आगे किया, उसी ने रक्त पीलिया।
फिर भी हृदय हथेली पर लेकर फिरता हूँ ।।

कोई तो समझेगा इस आसान सत्य को,
इसमें केवल रक्त नहीं, पीड़ाएँ भी हैं।
कुछ गरमी, कुछ स्पन्दन, कुछ सिहरन में लिपटे
मीठे-मीठे भावों की क्रीड़ाएँ भी हैं ।।

जिससे की दो बात, उसी ने ओठ सीदिया।
फिर भी मन की बात सुनाता ही रहता हूँ ।।

पथ के दावेदार बहुत, हमराही कम है,
इसीलिए ये कंटक हैं-कंकड़ हैं, गम है।
माना अभी निपूती है डाले गुलाब की,
लेकिन जड़ें सुरक्षित है, मौसम भी नम है ।।

जहां बढाया हाथ, वहीं पर शूल चुभा है।
फिर भी इन वीरानों में घूमा करता हूँ ।।

जैसे एक यही तो मेरा शोध-विषय है,
प्यार किसे कहते, व्यभिचार किसे कहते है।
इतनी लम्बी भीड़ लगी है अरमानों की
सार किसे कहते-निस्सार किसे कहते है ।।

जिससे जीवन मांगा, उसने चैन लेलिया।
फिर भी आशाओं का मुख चूमा करता हूँ ।।



आज तुम्हें सब समझाता हूं

वैसे आंसू बरसाता हूँ,
तुम्हें हंसाने को गाता हूँ।
यह जीवन ऐसा ही है कुछ,
आज तुम्हें सब समझाता हूँ ॥

घट रीते है, प्यास पुरानी,
पहरे में रहता है पानी।
कितनी बार उमड़ते घन की,
चातक ने की है अगवानी ॥

वीरानो मे घिर जाता हूँ,
अनजानों में फिर आता हूँ।
कहीं रूठ ना जायँ उमंगे,
इसीलिये उड़ता जाता हूँ ॥

बंजारे की बात निराली
मन में सोन-चिरैया पाली।
भटक रही है चाह बावरी
पीड़ा की करती रखवाली ॥

सुधियों पर तैरे जाता हूँ,
सदियों पर फेरे खाता हूँ।
रोज समानान्तर रेखाएं
खींच-खींच कर जी पाता हूँ ॥

लक्ष्य चरण के साथ रहा है।
दूर वरण का हाथ रहा है।
होठों पर ज्यों फूटे प्याली,
ऐसा हर आघात रहा है।।

अनसहनी सहता जाता हूँ,
अनकहनी कहता जाता हूँ।
अपनी एक परिधि है ऐसी,
जहां सुरक्षित रह पाता हूँ।



तुम हमें सांस भी एक दे ना सके

उम्र सारी हमारी तुम्हें सौंप दी
तुम हमें सांस भी एक दे ना सके।
जिन्दगी भेंट करदी उमंगों भरी
बांह मे तुम हमें हाय ! ले ना सके ।।

वह इशारा कि जैसे सितारा कोई
भाग्य की देहरी को प्रकाशित करे।
वह सहारा कि जैसे किनारा कोई
फेंक कर हर लहर को पुकारा करे ।।

वह खुशी जो हंसा कर रुलादे वही,
वह हवा जो उड़ा दे कही-की कहीं।।
सिलसिला जो चले टूटते-टूटते
एक हां में हजारों छुपे हों नही ।।

प्यास गंगा समझ कर तुम्हें दी मगर,
घूंट भर तृप्ति देते हुए भी थके।
तुम कहां दोगे विश्वास अपना भला,
द्वार आए दुआएं भी देते रुके ।।

तुम किरण हो हजारों अंधेरे भरी
दृश्य से दृष्टि रहती डरी-की-डरी।
एक प्याली न दोगे छलकती सुरा
ज्यों सुराही रहेगी भरी-की-भरी ।।

धूप जाते ही यह रूप ढल जायगा
चांदनी को अंधेरा निगल जायगा।
साज तब तुम संभालोगी ओ रागिनी !
स्वर बंधा कंठ का जब पिघल जायगा।।

भावना बस तुम्हारे सहारे रही
श्वास गिरने लगी और तुम ना झुके।
मन पखेरू दिया था तुम्हें पालने
पर शिकारी थे तुम प्यार कर ना सके।।



शपथ है राह तुझको लक्ष्य तक सीधी चली जाना

वड़ी मुश्किल से पाया है किसी का साथ जीवन ने।
शपथ है राह तुझको लक्ष्य तक सीधी चली जाना ।।

सवेरे के धुंधलके में दिखाई दे नहीं पाया,
कहां पर मोड़ हैं, अवरोध हैं, भय हैं, अंधेरे हैं ?
भटक कर चल पड़ा अनजान औ, वीरान-से पथ पर,
इसी से पीठ के पीछे निराशा के वसेरे हैं ।।

यहां तक आगये यह पांव जाने कौन वीथी से ?
वहुत दिन चढ़ गया है वावरी ! अव यों न भटकाना ।।

कुंआरा स्वप्न व्याहा है, लगन के गीत गूंजे हैं,
युगों की नींद में सोया हुआ अनुराग जागा है।
सुगंधी आ रही संतोष की ठंडी हवाओं से,
वहुत दृढ़ हाथ में अब भाग्य का कमजोर धागा है ।।

हुआ अनपेक्ष परिवर्तन न जाने किन सुकृत्यों से।
सयानी साधना है, अव कहीं धोखा नहीं खाना ।।

अभी तो बहुत लम्बी यात्रा है शेष पंथी की,
जहां तक दृष्टि दौड़ाऊँ वहां तक दृश्य अभिनव हैं।
हृदय निश्चिन्त है, आश्वस्त है आमुख भविष्यत् से,
वहुत सुन्दर-सुरीले पंछियों के आज कलरव हैं ।।

अभय है, देवता करुणार्द्र हैं, आशा उपस्थित है।
अरी भागीरथी ! अव यों कमंडल में न छुप जाना ।।



तुमने आंख उठाई मैंने आंख मली है

वैसे मैं विश्वास खो चला था अपना पर,
तुमने आंख उठाई, मैंने आंख मली है ।।

अब देखें कैसे खेते हो इस नैया को ?
कैसे सुलझाते हो इन उलझी लहरों को ?
कैसे समझाते हो आंधी तूफानों को ?
कैसे बात सुनाते हो गूंगे-बहरों को ?

मैंने तो पतवार छोड़ ही दी थी लेकिन,
तुमने किया इशारा तो कुछ आस फली है ।।

झंझा को देखो, मेरे साहस को देखो
हार थका इसलिए कि बस संघर्ष जिया है ।
तुम तो मेरी बात-बात के रहे गवाही ।
बोलो ना ! इन हाथों कितना जहर पिया है ।।

मैं अपना अपनत्व नशे में खो ही देता,
तुमने थामा हाथ तो दिखने लगी गली है ।।

अब सारा दायित्व तुम्हारे कंधों पर है,
हमको रहो सँभाले हम अनजान खड़े हैं ।
तुम चाहे कुछ भी मानो अपने मन में पर,
अब तो सच ही शेष सफर तक गले पड़े हैं ।।

मेरे तो सब साथ-सहारे बिखरे-ही थे,
तुमने प्रीति जताई तब फिर सांस चली है ।

आज तुम्हें जी लूं मैं

आज तुम्हें जीलूं मैं।
बहती संजीवनि से अंजुलि भर पी लूं मैं।।

ज्योति भरे घट फूटे।
तट के बन्धन छूटे।।
मुक्त बहे अमृत की धार
समय सब लूटे।।

घावों पर अपने दो टाके तो सीलूं मैं।
सतरंगी रथ दौड़े।
अंधियारा पथ छोड़े।।
जीवन की उछलती फुंआर
इन्द्र-धनु होड़े।

बांसुरिया बाजी तो स्वर कोई कीलूं मैं।।
भोर के उजासे में,
बिखरते कुहासे में।।
प्राण की प्रतिष्ठा हो आज
बुत तराशे में।।

उगते इस सूरज की कुछ किरणें लीलूं मैं।।

कण-कण में भगवान रे

मेरी महिमामय धरती के कण-कण में भगवान रे।
जिसने आंख उठाई उसका मिट जायेगा नाम रे॥

गली-गली में सूर कबीरा गाते हैं,
मीरा औ' रैदास तत्व समझाते है।
फिरते हैं रसखान आज भी उस धुन में,
नरसैया की हुंडी श्याम चुकाते हैं॥

तुलसी की कुटिया की करते रखवाली श्री राम रे।
जिसने आंख उठाई उसका मिट जाएगा नाम रे॥

मत समझो विश्वास सो गया सपनों में,
मत समझो अलगाव हो गया अपनों में।
मत समझो हो गया मान इतना सस्ता,
आ जाए छल-छद्म-वाद के चकमों में॥

लक्ष्मण-रेखा में है अब भी सीता का सम्मान रे।
जिसने आंख उठाई उसका मिट जाएगा नाम रे॥

जाग रहा उज्वल अतीत संस्कारों में,
गूंज रहा गांडीव शस्त्र टंकारों में।
वीर-वस्तु औ' वेश आज के हैं लेकिन,
युगों पुरानी हैं अन्तः की हुंकारें॥

मेरे रथ की रास अभी तक थामे है घनश्याम रे।
जिसने आंख उठाई उसका मिट जाएगा नाम रे॥

बजते जब रणवाद्य धर्म के द्वारों पर,
आता जब इतिहास स्वयं दीवारों पर।
अपनी हठ जब नहीं छोड़ते दुरयोधन
लगती है जब ठेस मूल अधिकारों पर ।।

युद्धभूमि में मुझे सुनाता कोई गीता ज्ञान रे।
जिसने आंख उठाई उसका मिट जाएगा नाम रे ।।

एक हाथ में चक्र, अन्य में वांसुरिया।
रण में गूंजे शंख, रास में पैंजनिया ।।
सतत् शत्रु संहार मित्र को प्यार प्रबल
प्रेम-नेम यों साथ निभाता सांवरिया ।।

इस मिट्टी ने नही सहा है सुरपति का अभिमान रे।
जिसने आंख उठाई उसका मिट जाएगा नाम रे ।।

कुरूक्षेत्र यह देह धर्म का क्षेत्र धरा

कुरूक्षेत्र यह देह धर्म का क्षेत्र धरा।
कृष्ण स्वयं चैतन्य, पार्थमन महा-समर के मध्य घिरा।।

कौरव कपट, सत्य ज्यों पांडव, मेधा द्रोण स्वरूप।
भाग्य स्वयं धृतराष्ट्र और सौभाग्य भीष्म का रूप।।
बुद्धि द्रौपदी, प्रज्ञा कुन्ती, गरिमा खुद गांधारी।
दोष दुशासन, शकुनि क्रोध यह पौरुष कर्ण अनूप।।

साहस भीम, स्वधर्म युधिष्ठिर, दुर्योधन दुश्चरित भरा।

अनगिन कष्ट-अभाव सैन्यदल, अस्त्र-शस्त्र विश्वास।
साधन ज्यों अभिमन्यु अल्पवय घिरा चक्रव्यूह त्रास।।
जयद्रथ द्रोह, शिखंडी संशय, घटोत्कच्छ आक्रोश।
काशिराज यश-कीर्ति अन्य नृप नाना भोग विलास।।

संजय अन्तर्दृष्टि, चित्त ही वेदव्यास विज्ञान खरा।

जीवन युद्ध, विजयश्री दृढता, हार मात्र व्यभिचार।
निर्णायक उत्थान-पतन का केवल एक विचार।।
स्वार्थ समस्या, भाव समन्वय, समाधान सौहार्द्र,
मुझमें मिला महाभारत का पूरा एक प्रकार।।

शत अध्यायी ग्रन्थ, खंड है बचपन, यौवन और जरा।



सौभाग्य सूर्य का उदय काल

यह मेरे सौभाग्य सूर्य का उदय काल है,
अभी तपूंगा दिनभर किरणों को फैलाता ।।

यह सारा संसार और मैं एक अकेला,
लेकिन सच मानो सच को सन्तुष्ट करूंगा ।
ये जितने भी घट अमृत के रिक्त पड़े हैं,
मैं अपने अक्षयी तेज से इन्हें भरूंगा ।।

यह मेरे विश्वास पंथ का प्रथम चरण है,
अभी चलूंगा मीलों तक हंसता-मुस्काता ।।

मैं हूं सबके साथ, साथ ना कोई मेरे ।
चारों ओर मुझे घेरे हैं घोर अंधेरे ।।
लेकिन मैं आलोक निरत संघर्ष निरन्तर,
बार-बार दे जाता हूं अम्बर के फेरे ।।

यह मेरे आनन्द सृजन का शुभारंभ है,
अभी खिलूंगा रंग-बिरंगी गंध सजाता ।।

अभी बहुत स्याही पीनी आभा देनी है ।
अभी कई वीराने नन्दन-वन करने है ।।
अभी सोखने है समुद्र कितने ही खारे,
मानसरोवर कई अभी मुझको भरने है ।।

यह मेरे दायित्व बोध का जागृत क्षण है,
अभी मिलूंगा सब ही से कर्तव्य निभाता ।।



आत्मानुभूति

मैं किसी उन्माद का आंसू नहीं जो,
ढुलकते ही पलक से अस्तित्व खो दे।
नीर हूँ उस भाव की मन्दाकिनी का,
जो युगों के पाप अपने आप धो दे॥

कुछ क्षणों का सुख मुझे भाता नहीं है।
राह में रुकना मुझे आता नहीं है॥
दृश्य जो पल-पल बदलते हैं जगत के,
सत्य मेरा इनसे कुछ नाता नहीं है॥

मैं समर्पित साध की आराधना हूँ।
मूक भाषा हूँ प्रणय के प्रथम क्षण की॥
मैं प्रबल विश्वास का उन्मेष पावन,
हूँ हठीली आन, निष्ठावान प्रण की॥

मैं अभय की रागिनी पर विजय की धुन।
मंत्र प्रज्ञावान ऋषियों की ऋचा का॥
मैं नहीं हूँ मर्त्य, अमृत-पुत्र हूँ मैं,
आवरण है मांस-मज्जा औ' त्वचा का॥

मैं मधुर सन्देश औ' आदेश हूँ वह,
सृष्टि संचालन स्वयं जो कर रहा है।
मैं नहीं हूँ जन्तु, मानव दिव्य हूँ मैं,
रंग दुनिया में नये जो भर रहा है॥

मैं कठिन संघर्ष का आदर्श उज्जवल ।
नित्य नूतन रूप नव निर्माण का हूँ ।।
स्वयं हूँ सौन्दर्य, शिव हूँ, सत्य भी हूँ,
मैं सलोना सुख सहज निर्वाण का हूँ ।।

आत्मा, परमात्मा, विश्वात्मा हूँ ।
सतत् सुख की साधना ही कर्म मेरा ।।
मैं सनातन शान्ति का सन्देश शाश्वत्,
धर्म में खुद हूँ, नही है धर्म मेरा ।।

शक्ति भय सद्भावना से सिद्ध हे मन ।
ज्ञान औ' विज्ञान का आधार हूँ मैं ।।
मैं स्वयं हूँ सूर्य निर्धारक समय का,
सार जीवन का स्वयं ही प्यार हूँ मैं ।।



तुमको मेरा साथ निभाना ही होगा

यह सारा संसार शत्रु बन जाये फिर भी,
तुमको मेरा साथ निभाना ही होगा ॥

यह कोई व्यौपार नही जो हानि-लाभ को,
किसी अनिश्चित सीमा में आबद्ध हो सके।
यह कोई अधिकार नही जो सहयोगी पर,
कृपा कर सके, या किंचित भी कुछ हो सके ॥

राहों के अवरोध अधिक ऊँचे होंगे पर,
तुमको अपना पाव बढ़ाना ही होगा ॥

यों स्थितिया हर रोज बदलती है जीवन की
पर विश्वास अपरिवर्तित है आदिकाल से।
सच है, सभी बंधे हैं उलझे मोहपाश में,
लेकिन दृढ़ता एक मुक्त है सभी जाल से ॥

चाहे चंचल हो जाये हर मूक वेदना।
तुमको मन का दीप जलाना ही होगा ॥

मन की कठिन विवशता ही का नाम प्यार है।
यहां बुद्धि के तर्क सदा ही क्षीण हुए है ॥
सच पूछो तो इसी स्नेह के वश में होकर,
बार-बार हम धरती पर अवतीर्ण हुए है ॥

प्रलय निशा में पुनः सृष्टि सोजाये भी तो,
तुम्हे नया संसार बसाना ही होगा।

मचलते मन में क्या अरमान

उड़-उड़ जाऊं पी की नगरिया, चाहे हो बदनाम।
मचलते मन में क्या अरमान ?

सूनी शाम, सिहरती रतियां, रोती भोर दिवस की घड़ियां।
मौसम बीत रहे है मानों, बेवस-से मेहमान।।
मचलते मन में क्या अरमान ?

मीठे मेघ घुमड़ते-घिरते, कहते दूत पवन के फिरते।
कोई दूर पुकारे तुझको, छोड़ सभी व्यवधान।।
मचलते मन में क्या अरमान ?

कैसी पीर विरह की भारी, जलते दीप घिरी अंधियारी।
बंधन-काट तिमिर के सारे, सत्य करूं अरमान।।
मचलते मन में क्या अरमान ?

जिनका साथ पुरातन मेरा, प्रकटे पाप भुलाया डेरा।
आकुल अन्तर की मनुहारें, परवशता का मान।।
मचलते मन में क्या अरमान ?

जोगन भेप देश अनजाने, ले-ले नाम सुनाऊं गाने।
क्या जाने किस कुंज गली मे, मिल जाये मुसकान।
मचलते मन में क्या अरमान ?



यह पतझड़ की दोपहरी है

मधुमासी रातों के सपने लाये हो पर,
मेरे भोलेभाले गीतों ! यह पतझड़ की दोपहरी है।

क्योंकर तीखी धूप समझ लूं शुभ्र चांदनी ?
इस आंधी को कैसे मलय-बयार मान लूं ?
रुदन घुट रहा, कैसे गाऊं प्रणय रागिनी ?
गरल घूंट पीकर कैसे मधुपान जान लूं ?

अविनाशी विश्वासों के घट लाये हो पर,
मेरे नन्हे मीतों ! मन पर पीड़ा की छाया गहरी है ?

अभी नहीं है समय शान्त सोने का मित्रों,
अभी बहुत ही व्यस्त और संतप्त खड़ा हूँ।
अभी लौट आओ सुख के मायावी चित्रों,
मैं संघर्षों की धारा के मध्य अड़ा हूँ ।।

चिर अभिलाषित मुस्कानें लाये हो लेकिन,
मेरे अनबोले मेहमानों ! नयनों में नदियां लहरी है।

आज विवश हूँ फिर आना जब फूल खिले हों,
जब कोयल बोले तब तुम्हें सजाऊँगा मैं।
जब मीठी कलरव से बगिया चहक रही हो;
सच मानो, यह मौन तोड़ तब गाऊँगा मैं ।।

सीवं की बरजोर तान लाये हो लेकिन,
मेरी महफिल के रखवालों ! अभी प्रीत गूंगी बहरी है।

भोर को आना पड़ेगा

यह निशा कब तक रहेगी ?
भोर को आना पड़ेगा।
लाख तम भय को बढ़ाये,
पौफटे जाना पड़ेगा ।।

लग रही हैं जो भयानक
भूत की परछाइयां-सी।
मन को तड़पाती हुई ये,
मृत्यु मुख की झाईयां-सी ।।

जगमगाती ज्योति में–
इनको दुबक जाना पड़ेगा ।।

क्या हुआ जो सो रहे हैं-
आस के सारे सहारे।
क्या हुआ जो दृष्टि में-
मँडरा रहे दुस्वप्न सारे ।।

जाग कर हर सांस को-
विश्वास बन जाना पड़ेगा ।।

हर दशा प्रतिकूलता की
ओर, बढ़ती ही रहेगी।
धूप छाया के खिलौने-
मौन विधि गढ़ती रहेगी ।।

छलछलाते नयन हैं तो,
खिलखिलाना ही पड़ेगा ।।

हार ही के द्वार पर तो-
जीत का संदेश बैठा ।
हर घृणा की गोद में ही
प्रीत का आधार पैठा ।।

जो मिटा है आज, उसको-
कल संवर जाना पड़ेगा ।।



मैं तुम्हें पाकर रहूंगा

तुम भले मानो—न मानो, मैं तुम्हें पाकर रहूँगा।
प्रीत के पुष्पों से जीवन बाग सरसा कर रहूँगा।।

देख लेना साध मेरी मोड़-देगी मन तुम्हारा।
एक दिन मांगोगे खुद ही इस दुखी दिल का सहारा।।

तुम घृणा के जाल तानो, मैं मिटा कर ही रहूँगा।
प्रीत के पुष्पों से जीवन बाग सरसा कर रहूँगा।।

हठ बढ़ालो खूब अपनी, हृदय को पाषाण करलो।
इस अबोलो-सी लगन पर खुल कुठाराघात करलो।।

तुम रुलाने ही की ठानो, मैं हंसा कर ही रहूँगा।
प्रीत के पुष्पों से जीवन बाग सरसा कर रहूँगा।।

गरल के गुब्बारे छोड़ो, कंटकों से राह भर दो।
फिर भी ना संतोष हो तो जिन्दगी अभिशाप कर दो।।

तुम जतन कर दूर हो लो, पास मैं लाकर रहूँगा।
प्रीत के पुष्पों से जीवन बाग सरसा कर रहूँगा।।

रूठने में रंच भी तुम न्यूनता आने न देना।
वक्र अपनी आख को तुम सरलता लाने न देना।।

मैं तुम्हारी दृष्टि में खुद को बसा कर ही रहूँगा।
प्रीत के पुष्पों में जीवन बाग सरसा कर रहूँगा।।

प्यार अभी तक बाकी है।

तुम तार हिला कर चले गये,
झंकार अभी तक बाकी है।
वह क्षण अलबेला निकल गया
पर प्यार अभी तक बाकी है।।

राही थे तुमको जाना था,
पनघट पर कैसे टिक जाते ?
दो नैन मिले क्या इसीलिए
अपने रस्ते से डुल जाते।।

तुम नीर बहा कर चले गये।
लो धार अभी तक बाकी है।

मंजिल का तुमको मोह रहा,
चलने की तुमको रही चाह।
तुममें उछाह था यौवन का
सुन सके न तुम वह सर्द आह।।

तुम घात लगाकर चले गये।
वह बात अभी तक बाकी है।।

दे गये भाव कुछ मौन-मौन,
कुछ अनजानी बातें दे दीं।
कर गये हृदय का रिक्त भौन
ये भारी-सी रातें दे दीं।।

तुम श्वास दिला कर चले गये,
विश्वास अभी तक बाकी है।

निर्मोही लगते थे, लेकिन
मन डाल गये हो मोह जाल।
अनजाने परदेशी थे, पर
जानी पहचानी लगी चाल॥

तुम वार चलाकर चले गये,
पर मार अभी तक बाकी है।

सारा यथार्थ हो गया गौण
सपनों का बस संसार लगा।
डूबी-डूबी सी रहे आंख,
अन्तः में ऐसा ज्वार लगा॥

तुम आग लगाकर चले गये,
लो झार अभी तक बाकी है।

वह मीठी-सी चितवन कठोर,
स्मृतियों के पट पर छाई है।
तेरी छवि की वह मादकता,
जीवन में रंगत लाई है॥

तुम तीर चला कर चले गये,
पर पीर अभी तक बाकी है।
वह क्षण अलबेला निकल गया
पर प्यार अभी तक बाकी है॥



निशा बाकी है

चांदनी समेटो मत चांद निशा बाकी है।
तुमको अवकाश उषा आते ही दे देगी।।

भय भरी-कंटीली-अस्पष्ट बहुत राहें हैं।
किरणों के साथ-साथ इतना चल आया हूँ।।
मिलता पगडंडी से यहीं-कहीं राज-मार्ग,
देखो ना ! कितना आश्वस्त निकल आया हूँ।।

रोको मत स्नेह सुधा सोम ! गरल बाकी है।
सारी क्षतिपूर्ति तुम्हें धूप स्वयं भर देगी।।

सन्नाटा ले रहा उबासी अलसाया-सा
सोया कोलाहल अंगड़ाई ले जागा है।।
डरता था रात पवन पत्ता खनकाते भी,
वनपांखी संग वही वृक्ष-वृक्ष भागा है।।

अंधियारा क्षीण ! किन्तु संधिकाल बाकी है।
तुमको विश्राम प्रचुर नवआशा दे देगी।।

लक्ष्य भी सुनिश्चित औ' आगे गतिरोध नहीं।
हंसते हैं कमल खिले आस की तलाई में।
सतरंगी अश्वों का रथ आने वाला है।
पाकर ही जाओ उपहार कुछ भलाई में।।

थोड़ा विश्वास तक प्रयास अभी बाकी है।
तुमको आनन्द अभय मुक्त दिशा दे देगी।।



मैं सुनता रहा, रात ढलती रही

सांस के तार पर रागिनी प्यार की
मैं सुनता रहा रात ढलती रही ।।

साज बजते रहे साध के साथ में
धड़कनों की मृदंगें गुड़कतीं रहीं ।
पांव बेजान थे भाव बेमान थे,
प्यास नर्तन को लेकिन मचलती रही ।।

पीर की धार पर जिन्दगी की तरी
मैं बहाता रहा राह कटती रही ।।

स्वर छिड़े तो घने मौन मुखरित हुए
टिमटिमाते सितारे थिरकने लगे ।
जो अंधेरे निगलने खड़े थे मुझे
दूर जाने वे क्योंकर सरकने लगे ।

राग की आग में, भय भरी बस्तियां ।
मैं जलाता रहा घात टलती रही ।

साथ सारे समय में महावेग में,
मिल गये थे विवश औ' विवश खो गये ।
जिस जगह भावना लड़खड़ाने लगी
उस जगह हम जगे ही जगे सो गये ।।

प्यार की प्यास में आंसुओं की झड़ी
मैं लगाता रहा, प्यास बुझती रही ।



धूप खिली पंख तो पसर

धूप खिली पंख तो पसार।
आकाशी मीत ! तनिक भार तो उतार ।।

ओठों पर अनगाये गीत।
सुधियों में अनब्याही प्रीत ।।

दूर-दूर आज फिर पुकार।
भूला-सा नाम बार-बार ।।
खोज कहीं खोये तिनकों का आधार।

धूप खिली..................

फूली है चांदनी कनेर।
कांटों पर उग आये बेर ।।

गमक रही कोमल कचनार।
सरिता औ' सागर में ज्वार ।।
धूल झड़ी सुरभि देख ! करती मनुहार।

धूप खिली............

कोलाहल कर रहा किलोल।
तू भी मनचाहा कुछ बोल ।।

गली-कुंज-घाट के विहार।
आंख खोलकर सभी निहार ।।
शायद मिलजाये सपनों का आकार।

धूप खिली............



सुधियों का सौदागर

मौसम ने आज मुझे कितना तरसाया रे।

ऊषा की लाली में वासन्ती फूल।
फागुनी हवा से मिल इतराती धूल।।
लहरों को चूम रहा किरणों का जाल,
कलियों की आंखों में शरमीली भूल।।

फूली अमराई में जियरा भर आया रे।

पास की अटारी पर बोल उठा काग।
पनघट पर कोकिल ने भड़काई आग।।
रह-रह उर अंतर में उठती है टीस,
दो-दो अलगोजों पर ग्वाले की फाग।।

महुए की छांह तले और नशा छाया रे।

भीड़ भरी गलियों में आंचल उड़ जाय।
रेशम की अंगिया का बन्धन खुल जाय।
गरमायी सांसों पर स्मृतियों का शोर,
डूबी-सी आंखों में सपना तिर जाय।।

सुधियों का सौदागर छलने को आया रे।

धन्यवाद मन को......

कानों में कोई कुछ कह गया।
धन्यवाद मन को जो सह गया ॥

भीड़ में पुकारें खो जाती हैं।
चौंक कर गुहारें सो जाती हैं ॥
यत्न से सजाई हर रंगोली,
मौसमी बयारें धो जाती हैं ॥

ऐसे में अपनापन रह गया,
धन्यवाद अश्रु को जो वह गया ॥

जाने अनजाने की कामना।
दो पैसे सेर बिकी भावना
झोली में केवल आकाश रहा,
दृश्य हर बदल गया सुहावना ॥

क्षण भर को सत्य साथ दे गया,
धन्यवाद झूठ को जो ढह गया ॥

पीपल के पत्तों पर धूप पड़ी।
लहरों पर चांदी की पर्त चढ़ी।
हर तरफ खुमार भरा रंग जमा,
ज्यों जुड़ी उमंगों की एक लड़ी ॥

मेरा अनुमान था कि यह गया।
धन्यवाद उसको जो वह गया ॥